भारतीय वन अधिनियम, 1927 की आवश्यकता
(Necessity of the Indian Forest Act, 1927)

वनों के दुरुपयोग एवं उन्हें क्षय से बचाने के लिए वन संरक्षण अति आवश्यक है। वनों के संरक्षण से तात्पर्य समस्त पेड़-पौधों से है। मानव जीवन के लिए वनों के महत्त्व को देखते हुए हमें सभी सम्भव उपायों के द्वारा इन्हें संरक्षण प्रदान करना चाहिए। पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी सन्तुलन बनाये रखने के लिए मानव को वन संरक्षण करना आज विश्व की प्राथमिक आवश्यकता है, क्योंकि उपजाऊ मिट्टी का कटाव, भयंकर भूस्खलन, प्रलयकारी बाढे, भयावह सूखे, वर्षा की कमी, पर्यावरण प्रदूषण, पारिस्थितिकी असन्तुलन से आज सभी त्रस्त हैं, जो वनोन्मूलन के ही परिणाम हैं। इस दशा में सभी देश प्रयत्नशील हैं।

भारत में वन नीति एवं प्रबन्धन कीं नीव ब्रिटिश सरकार द्वारा वन विभाग की स्थापना करके रखी गई थी। ब्रिटिश सरकार ने वन-सम्पदा के संरक्षण हेतु 19वीं शताब्दी में अनेक कानून पारित किये। ब्रिटिश सरकार का विचार था कि कि वनों का संरक्षण एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा है जिसे कोई असंगठित अथवा समुदाय द्वारा नियन्त्रित नहीं किया जा सकता। इसके लिए विधिवत् प्रशिक्षित तथा केन्द्रीय रूप से संगठित अधिकारियों एवं कर्मचारियों का होना आवश्यक है। ये अधिकारी वे कर्मचारी ही उचित ढंग से वनों का प्रबन्ध कर सकते हैं।

वनों, वन-उपज के अभिवहन तथा इमारती लकड़ी एवं अन्य वन-उपज पर उदग्रहणीय शुल्क से सम्बद्ध विधिक के समेकन के उद्देश्य से भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल ने 21 सितम्बर, 1927 को हस्ताक्षरित करके लागू किया। यह केन्द्रीय अधिनियम के रूप में स्वीकृत है।

भारतीय वन अधिनियम, 1927 के उद्देश्य
(Objective of the Indian Forest Protection Act, 1927)

इस प्रकार भारतीय वन अधिनियम, 1927 के पारित किये जाने का उद्देश्य वनों, वन-उपज, इमारती लकड़ी तथा अन्य वन उत्पादों का संरक्षण करना, इन्हें लाने ले जाने के सम्बन्ध में प्रावधान करना तथा कर

Scanned by TapScanner
Scanned by TapScanner

अधिकारियों को वनों के संरक्षण के लिए अधिकार शक्ति देना है। इस अधिनियम की प्रस्तावना में भी कहा गया है क्योंकि वन-उपज के अभिवहन तथा इमारती लकड़ी और वन्य वन-उपज पर उद्ग्रहणीय शुल्क से सम्बद्ध विधि का समेकन करना समीचीन है, इसलिए एतद् द्वारा यह निम्नरूपेण में अधिनियमित किया जाता है—

संक्षिप्त नाम और विस्तार—भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 1 के अनुसार—

(1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम भारतीय वन अधिनियम, 1927 है।

(2) इसका विस्तार उन राज्य क्षेत्रों के अतिरिक्त जो, 1 नवम्बर, 1956 से ठीक पूर्व भाग-ख राज्यों में समाविष्ट थे, समस्त भारत पर है।

(3) यह उन राज्य क्षेत्रों पर लागू है जो 1 नवम्बर, 1956 से ठीक पूर्व बिहार, मुम्बई, कुर्ग, दिल्ली, मध्य प्रदेश, ओडिशा, पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिमी बंगाल में समाविष्ट थे, लेकिन कोई भी राज्य सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा ऐसे अधिनियम को उस पूर्ण राज्य में या उसके किसी विशिष्ट भाग में, जिस पर यह विस्तारित है तथा जहाँ पर यह प्रवृत्त नहीं है, प्रवर्तन में ला सकेगी।

प्रकृति के साथ सामंजस्य से रहना सीखने का विचार
(Concept of Learning to Live in Harmony with Nature)

मनुष्य तथा उसका पर्यावरण दोनों परस्पर एक-दूसरे से इतने सम्बन्धित है कि उन्हें एक-दूसरे से अलग करना कठिन है। मनुष्य प्राकृतिक पर्यावरण का महत्त्वपूर्ण घटक है। ऋग्वेद में मनुष्य तथा उसके पर्यावरण को अधिक महत्त्व दिया है। वास्तव में मनुष्य तथा उसका पर्यावरण दोनों एक हैं, उन्हें अलग नहीं किया जा सकता है।

वैदिक युग में ही पर्यावरण के सम्बन्ध में यह जागरुकता रही है कि प्राकृतिक स्रोतों का अधिक उपयोग करने से मनुष्य का अपना ही अहित होगा, इसलिए प्राकृतिक स्रोतों का उपयोग अधिक नहीं किया जाये, इसी में मानव का हित है। पृथ्वी का अर्थ होता है—पहाड़, पौधे, मरुस्थल, पर्वत, महासागर, नदियाँ, स्थली खण्ड को भूमि अर्थात् सर्वव्यापी मातृभूमि या माँ कहते हैं। यह मनुष्य के कल्याण के लिए सभी प्रकार की चीजें हमें देती है, इसमें मानव जीवन का महत्त्वपूर्ण पक्ष माना जाता है। मनुष्य पृथ्वी की देन है, वह उसके बिना जीवित भी नहीं रह सकता है। पृथ्वी मनुष्य की माँ है तथा दूसरी ओर वह उसकी स्वामी भी है। वैदिक युग में मनुष्य का कार्य मनोरंजन और पृथ्वी की शुभकामनाओं एवं आर्शीवाद प्राप्त करने के लिए करता था, क्योंकि वह उसे अपना घर, परिवार तथा अपना शरीर मानता था। 'पुरुष प्रकृति' के आविर्भाव के सिद्धान्त के अनुसार सभी को जीने का अधिकार है, मनुष्य को इसमें अपना योगदान देना चाहिए।

प्रकृति के साथ सामंस्य करके सीखने में स्कूल तथा पर्यावरण शिक्षा की भूमिका

उर्पयुक्त विचार को बढ़ावा देने के लिए पर्यावरण शिक्षा का बहुत अधिक महत्त्व है। इसे निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है—

(1) पौधों का मनुष्य के लिए महत्त्व (Importance of Plants for Man)—अनेक पौधे मनुष्य के जीवन के लिए अधिक उपयोगी हैं, जिन्हें मनुष्य आदि काल से प्रयोग करता आ रहा है। ऋषियों तथा मुनियों ने पौधों के महत्त्व की अनुभूति की थी और उन्हें धर्म में सम्मिलित किया था जिससे उनका मनुष्य द्वारा संरक्षण किया जाये।

अनेक पौधे, वृक्ष तथा वन्य जीवन मनुष्य के जीवन के लिए कितने उपयोगी तथा महत्त्वपूर्ण हैं इसका वर्णन नहीं किया जा सकता है। ऋग्वेद के ऋषियों को इसका सही ज्ञान था। वह सब कुछ जानते तथा समझते थे कि प्राकृतिक स्रोतों का स्वास्थ्य के लिए कितना महत्त्व है। यदि इन्हें कोई हानि पहुँचाई जायेगी तो अन्त में मानव

Scanned by TapScanner
Scanned by TapScanner

(2) मानव की शारीरिक रचना (Formation of Human Body)—वैदिक काल के ऋषियों अनुसार मनुष्य का शरीर पाँच तत्वों–वायु, जल, अग्नि, पृथ्वी तथा आकाश से बना है। ऋग्वेद में जल की पू का विधान है, क्योंकि जल से हृदय तथा शरीर शुद्ध होता है, जल अपने में औषधि है, सरस्वती नदी देवी क रूप है।

वायु वास्तव में आत्मा तथा प्रभाव की शक्ति है जो चलायमान रहती है, वायु जीवन का अंश है, इसक सम्बन्ध 'प्राणों' से होता है। इसलिए, वायु, प्रदूषण वर्जित तथा दण्डनीय मानते हैं। आज भी इस प्रकार के कानून बन गये। वायु प्रदूषण करने वाले वाहनों तथा अन्य अभिक्रमों को दण्डनीय मानते हैं।

ऋग्वेद के ऋषियों को मौसम की भी जानकारी थी जिसे 'ऋतु' कहा गया है। इन्द्र को मौसम का राजा माना गया है, इन्द्र मौसम की सुरक्षा करते हैं।

(3) पर्यावरण शिक्षा का आधार (Roots of Environmental Education)—पर्यावरण शिक्षा का सम्बन्ध भी वैदिक काल से है, क्योंकि यह सब कुछ जानकारी देना पर्यावरण शिक्षा का ही क्षेत्र रहा है। यह सोचना कठिन तथा असम्भव प्रतीत होता है कि मनुष्य या पर्यावरण से अलग है, क्योंकि जीवन और पर्यावरण का निकट का सम्बन्ध है। यह धारणा रही है कि पर्यावरण को क्षति पहुँचाने का अर्थ अपना अहित करना है। हिन्दू धर्म में प्रकृति तथा जीवधारियों व पौधों से पारस्परिक सम्बन्ध मानते हैं तथा एक-दूसरे का आदर और सम्मान करते हैं। जैसा ऊपर उल्लेख किया गया है कि अनेक पशु-पक्षी हमारे देवी व देवताओं के वाहन है जिनकी हम पूजा करते हैं। पौधों तथा वृक्षों का भी उल्लेख देवी व देवताओं से मानते हैं। उनकी पूजा होती है

Scanned by TapScanner
Scanned by TapScanner